डॉ० नारायण दत्त श्रीमाली
सिद्धाश्रम
साधना सिद्धि
एस-सीरीज

ज्ञान और चेतना की अनमोल कृतियां

पूज्यपाद गुरुदेव
डॉ० नारायण दत्त श्रीमाली जी

द्वारा रचित अनमोल ग्रंथ . . .

गुरु गीता	150/-	दैनिक साधना विधि	30/-
ज्योतिष और काल निर्णय	150/-	झर झर झर अमरत झरै	30/-
निखिलेश्वरानन्द स्तवन	120/-	तांत्रोक्त गुरु पूजन	30/-
हस्तरेखा विज्ञान व पंचांगुली साधना	120/-	स्वर्णिम साधना सूत्र	30/-
		गुरु सूत्र	30/-
निखिल सहस्रनाम	96/-	सिद्धाश्रम साधना सिद्धि	15/-
विश्व की अलौकिक साधनाएं	96/-	गुरु संध्या	15/-
ध्यान, धारणा और समाधि	96/-	अप्सरा साधना	15/-
निखिलेश्वरानन्द शत कम	75/-	दुर्लभोपनिषद	15/-
अमृत बूंद	60/-	शिष्योपनिषद	15/-
स्वर्ण तंत्रम	60/-	भुवनेश्वरी साधना	15/-
लक्ष्मी प्राप्ति	60/-	दीक्षा संस्कार	15/-
निखिलेश्वरानन्द चिन्तन	40/-	षोडशी त्रिपुर सुन्दरी	15/-
सिद्धाश्रम का योगी	40/-	महाकाली साधना	15/-
निखिलेश्वरानन्द रहस्य	40/-	धनवर्षिणी तारा	15/-
आधुनिक हिप्नोटिज्म के 100 स्वर्णिम सूत्र	50/-	बगलामुखी साधना	15/-
		नारायण सार	10/-
प्रत्यक्ष हनुमान सिद्धि	40/-	गुरुदेव	10/-

पूज्यपाद सद्गुरुदेव की अन्तिम यात्रा पर तैयार इस कैसेट में उनके प्रमुख प्रवचनों, उपदेशों एवं सन्देशों का भी समावेश किया गया है, जिससे इस कैसेट का महत्व और भी अधिक बढ़ गया है और प्रत्येक शिष्य के लिए एक तरह से ये संग्रहणीय कैसेट है।

वीडियो कैसेट

महाप्रयाण

– रु. 300/-

सम्पर्क

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान, डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाईकोर्ट कॉलोनी, जोधपुर फोन: 0291-432209
सिद्धाश्रम, 306 कोहाटएन्क्लेव, पीतमपुरा, नईदिल्ली फोन: 7182248, फैक्स: 7196700

आशीर्वाद

डॉ. नारायण दत्त श्रीमाली

एस–सीरीज

संकलन एवं सम्पादन
श्री अरविन्द श्रीमाली

प्रकाशक
मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान
डॉ० श्रीमाली मार्ग, हाई कोर्ट कॉलोनी,
जोधपुर - ३४२ ००१ (राज.)
फोन : 0291-432209, फैक्स : 0291-432010

द्वितीय मुद्रण	:	मकर संक्रान्ति, 2000
मूल्य	:	15/-
मुद्रक	:	**R.S. OFFSET PRINTERS, PEERA GARHI ✆ 5582040**

इस पुस्तक में सद्गुरुदेव डॉ० नारायण दत्त श्रीमाली जी के प्रवचन, पत्रिका एवं उनके प्रकाशित ग्रंथों का संयोजन किया गया है।

पूज्य गुरुदेव
डॉ० नारायण दत्त श्रीमाली

साफल्य

जीवन में सर्वाधिक भयास्पद क्या है? जीवन में किस बात की कल्पना तक सबसे अधिक यंत्रणादायक है? जीवन में किस बात का चिंतन एक शून्यता भर देता है? क्या है वह तथ्य जिससे ओंठों पर आ रही स्मित भी निष्प्राण, निर्जीव हो जाती है? जीवन का समस्त आनंद व्यर्थ सिद्ध होने लग जाता है और स्वयं जीवन अपने-आप में एक अपूर्णता का पर्याय प्रतीत लगने लग जाता है?

रोग नहीं, शोक नहीं, पीड़ा नहीं, तनाव नहीं-इन्हें तो व्यक्ति जानता है कि ये जीवन के अस्थायी पल हैं, इनसे विमुक्ति मिल जानी संभव है। जीवन को अनेक चरणों में से हो कर तो आना ही पड़ेगा, इसका तो बोध जीवन में चेतना आने के प्रथम क्षण से हो ही जाता है, इनके संभावित हल भी ढूंढ लिए जाते हैं, किंतु जिस बात का कोई हल नहीं ढूंढा जा सकता, वह होती है – मृत्यु!

एक पल की ही घटना किंतु एक ही पल में कितना अधिक परिर्वतन! एक ही पल में जो कुछ उपलब्धि थी, वह अनुपलब्धि में बदल जाने की घटना . . . और यह तो नहीं हो सकता जीवन का साफल्य।

मृत्यु तो एक संक्रमण की स्थिति होनी चाहिए, फटे पुराने वस्त्रों की भांति शरीर को बदल लेने की बात कही भी गई है शास्त्रों में। पर इन फटे पुराने वस्त्रों को त्यागने के बाद कौन से हों वे वस्त्र, जिन्हें धारण किया जा सके? क्या पुनः नूतन जन्म लेना ही तात्पर्य रहा होगा श्रीमद्भागवत गीता का? गर्भ के दुःसह्य आवरण से होते हुए मल-मूत्र भरे जीवन से होकर पुनः एक बार गर्भ में जाने की घटना में नवीनता ही क्या?

नवीनता तो तब है, नूतन वस्त्रों को धारण करना तो तब संभव है, जब कुछ इससे पृथक घटित हो। किंतु कैसे घटित हो? किस रूप में घटित हो? किस युक्ति से घटित हो? किसके माध्यम साहचर्य एवं कृपा दृष्टि से घटित हो . . . जीवन का साफल्य हो! इसी का समाधान है यह ग्रन्थ।

– प्रकाशक

सिद्धाश्रमोऽयं परिपूर्ण रूपं, ज्ञानाय दिव्यं चैतन्य रूपम्।
आप्रक्षभूमं परमं पवित्रं, दिव्यं सतां वै परिपूर्ण नित्यम्।।

आज मैं उस अत्यन्त पवित्र और दिव्य सिद्धाश्रम के बारे में आप समस्त शिष्यों की जो इच्छाएं हैं, जो भावनाएं हैं और जो अनसुलझे प्रश्न हैं, उनका उत्तर देने का प्रयास कर रहा हूं, जो कि अपने-आप में ही प्रामाणिक हैं, और जो आज के वैज्ञानिक युग में भी सत्य हैं। इसीलिए तो इस श्लोक में सिद्धाश्रम को आध्यात्मिक चेतना का केन्द्र कहा गया है, समस्त ब्रह्माण्ड को सही ढंग से संचालित करने की क्रिया बताया गया है, भौतिकता और आध्यात्मिकता का जो संतुलन होना चाहिए, वह संतुलन केवल इस सिद्धाश्रम के द्वारा ही सम्भव है, और इसीलिए यह स्वाभाविक है, कि आप सिद्धाश्रम के बारे में ज्यादा से ज्यादा जानें।

और ये प्रश्न केवल आपके ही प्रश्न नहीं हैं, ये समस्त साधकों के प्रश्न हैं, अधिकतर शिष्यों के प्रश्न हैं, अधिकतर चिन्तकों और विचारकों के प्रश्न हैं। इसीलिए आज की इस पवित्र और पावन बेला में आपने जो कुछ प्रश्न किये हैं और कर रहे हैं, मैं परम पूज्य गुरुदेव स्वामी सच्चिदानन्द जी का पूर्ण श्रद्धायुक्त स्मरण करता हुआ, उन प्रश्नों का समाधान करने का प्रयास कर रहा हूं।

➛ पूज्य गुरुदेव जी सिद्धाश्रम क्या है? इसके बारे में हमें कुछ बताने की कृपा करें?

➛ सिद्धाश्रम एक चेतनापुंज है और आध्यात्मिकता का आधार है, क्योंकि जीवन में भौतिकता व्यक्ति को केवल स्वार्थी और छलमय, कपट और व्यभिचार युक्त बना देती है, उसके मन की वृत्तियों को अत्यन्त दूषित और विषैला बना देती है। इसलिए इस भारतवर्ष की भूमि पर या मैं यों कहूं, कि पूरे ब्रह्माण्ड में एक ऐसा भी स्थान है, जो अपने–आप में अद्वितीय, श्रेष्ठतम और पवित्र धाम है, जिसको वेदों में भी सिद्धाश्रम के नाम से ही पुकारा गया है। वेद जो हमारी आदि–कालीन संस्कृति हैं, हमारे पूर्वजों और हमारे ऋषियों का आधारभूत सत्य हैं, उन्होंने भी अपने जीवन में इस बात को स्वीकार किया है, महसूस किया है, कि वास्तव में ही जीवन की पूर्णता केवल सिद्धाश्रम में जाने पर ही सम्भव है। इसीलिए उन्होंने वेद की ऋचाओं में स्पष्ट रूप से प्रश्न किया है कि सिद्धाश्रम क्या है? और इसी ऋचा के उत्तरार्ध में किसी ऋषि ने उत्तर दिया है –

"जीवनं परिर्वै परिपूर्णतां मृत्योर्वै अमृतं गमय सांम पूर्वः सः सिद्धाश्रमः"

इस जीवन में हम सत्य से साक्षात्कार कर सकें, अपने जीवन में पूर्णता प्राप्त कर सकें और मृत्यु से अमृत्यु की ओर जा सकें, वह सब कुछ प्राप्त कर सकें, जो ब्रह्माण्ड में है और ब्रह्माण्ड में क्या–क्या क्रियाएं हो रही हैं, उनका ज्ञान प्राप्त कर सकें।

क्या–क्या घटनाएं घटित हो रही हैं? जीवन का चिन्तन क्या है? देवता क्या है? लोक क्या है? कौन–से लोक हैं? ब्रह्म लोक, विष्णु लोक, रुद्र लोक की क्या स्थितियां हैं? वह सब कुछ आम व्यक्ति भी देख सके, इसीलिए उस सिद्धाश्रम का वर्णन व विवरण वेदों में भी आया है, और इसीलिए प्रत्येक ऋषि, प्रत्येक साधक, प्रत्येक योगी और प्रत्येक चिन्तक की यही धारणा रही है, कि वह सिद्धाश्रम में जाये और अपने जीवन को अमृत्युवान बना दे, अपने जीवन को पूर्णता दे, अपने जीवन को श्रेष्ठता दे।

➛ *पूज्य गुरुदेव जी! इसे सिद्धाश्रम के नाम से ही क्यों जाना जाता है?*

➛ यह महत्वपूर्ण प्रश्न है, कि सिद्धाश्रम क्या है? मैंने जैसा बताया, कि आज का युग और आज का युग ही नहीं, वैदिक काल से लगाकर आज तक का युग स्वार्थमय रहा है, चाहे वह रामायण कालीन हो, चाहे महाभारत कालीन हो और चाहे वेदोक्त कालीन हो। व्यक्ति में प्रारम्भ से ही काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहं की भावना, चिन्तन, विचार में रहा ही है, और ऐसी स्थिति में इस भौतिकता को आध्यात्मिकता में रूपान्तरित करने के लिए एक आश्रम की कल्पना, एक आश्रम का चिन्तन आवश्यक था, इसीलिए सिद्धाश्रम का चिन्तन किया गया।

यह एक ऐसा श्रेष्ठ, सर्वसम्पन्नता युक्त, अद्वितीय आश्रम बना, जिसकी दीवारें नहीं हैं, छत नहीं है, मगर यह अपने-आप में ही एक ऐसा आश्रम है, जहां पर जाते ही मन पूर्णरूप से पवित्र और दिव्य बन जाता है, जहां पर जाते ही व्यक्ति की पूर्ण समाधि स्वतः ही लग जाती है, जहां पर जाते ही मन में एक प्रसन्नता और चैतन्यता प्राप्त हो जाती है, और मन का सारा विषाद, सारा दुःख, सारा दैन्य, सारा कष्ट एवं शरीर की सारी जर्जरता अपने–आप में ही समाप्त हो जाती है। वह एक अद्‌भुत आनन्द से, एक अद्‌भुत उमंग से, एक अद्‌भुत उछाह से भर जाता है, उसके जीवन में एक गुनगुनाहट सी आ जाती है।

इसीलिए सिद्धाश्रम में ऋषियों, मुनियों, योगियों, देवताओं, चिन्तकों, विचारकों, साधकों, साधुओं और संन्यासियों का समावेश है। वे वहां कई हजार वर्षों से साधनाएं सम्पन्न कर रहे हैं, और ब्रह्माण्ड के उन रहस्यों को ढूंढने का, उन रहस्यों को जानने का प्रयत्न करते हैं, जो कि अपने–आप में श्रेष्ठतम हैं, जिसको जानना योगियों के लिए भी दुर्लभ है, वे ब्रह्माण्ड के रहस्य भी वहां जाने जा सकते हैं, और जाने जाते हैं।

➛ *गुरुदेव! सिद्धाश्रम के बारे में हम लोगों को विस्तृत रूप से जानने की जिज्ञासा हो रही है। आप उसके बारे में बताइये?*

➛ तुम्हारा प्रश्न स्वाभाविक और महत्वपूर्ण है, किन्तु पूरे सिद्धाश्रम

को शब्दों में बांधा जा सके, यह तो अत्यन्त कठिन है, क्योंकि करोड़ों गुना आनन्द को और करोड़ों गुना माधुर्य को कुछ ही शब्दों में नहीं बांध सकते। वह तो वहां प्रत्यक्ष रूप से देखने और अनुभव करने पर ही उस आनन्द की पूर्णता और तृप्ति का ज्ञान हो सकता है, परन्तु जब तुमने जिज्ञासा व्यक्त कर ही दी है, तो वहां की कुछ विशेषताओं को मैं स्पष्ट कर रहा हूं।

एक तो वहां चारों तरफ अद्वितीय शांति और आनन्द की फुहार होती रहती है। सिद्धाश्रम की दूसरी विशेषता है, कि चौबीसों घण्टे वहां दूधिया प्रकाश सा छाया रहता है, न सूर्य की प्रखरता होती है और न रात्रि के अन्धकार की छाया होती है। चौबीसों घण्टे एक ऐसा प्रकाश जो अत्यन्त ही शीतल, मधुर और आनन्ददायक है, प्रकाशित होता है।

सिद्धाश्रम की तीसरी विशेषता यह है, कि वहां लाखों तरह के पुष्प और कमल विकसित हैं, जो इस धरा पर, अन्यत्र कहीं पर भी विकसित नहीं हैं, और फिर उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है, कि वे पुष्प मुरझाते नहीं हैं, वे गिरते नहीं हैं, वे खिले हुए रहते हैं, चिरयौवनमय हैं, क्योंकि वहां पर प्रत्येक व्यक्ति, प्रत्येक साधिका, प्रत्येक साधक के ऊपर मृत्यु की छाया नहीं पड़ती, काल उनका जीवन छीन नहीं सकता, बुढ़ापा उन पर आक्रमण नहीं कर सकता, क्योंकि उस सिद्धाश्रम में 'मृत्यु' और 'बुढ़ापे' जैसे शब्द हैं ही नहीं।

इसलिए वहां की वायु में एक संगीत है, एक थिरकन है, एक गुनगुनाहट है, एक मधुरता है, एक प्रकार की अद्वितीयता और आनन्द है। वहां जाते ही एकदम से स्वतः समाधि लगने की प्रक्रिया बन जाती है. . . और ऐसी स्थिति बन जाती है, जैसे हम पूर्णतः अपने–आप में डूब गये हों, उस देव संगीत के माध्यम से, जो निरन्तर वहां गुंजरित हो रहा है, उसको सुन करके मन को एक अपूर्व तृप्ति अनुभव होती है।

निर्धारित स्थल पर यज्ञशालाएं हैं और उच्चकोटि के योगी यज्ञ कर रहे हैं। कई स्थानों पर संन्यासी सैकड़ों वर्षों से समाधि लगाये हुए साधनाएं कर रहे हैं। कहीं पर साधिकायें किलोल कर रही हैं

विनोद कर रही हैं, हंसी–मजाक कर रही हैं, तो कहीं पर अप्सरायें स्वतः नृत्य कर रही हैं, उत्साह से भर रही हैं, उछाह से भर रही हैं। कहीं पर सिद्धयोगा झील के किनारे वे सिद्ध योगी, साधिकायें और साधक बैठे हुए, किलोल करते हुए सिद्धयोगा झील में अद्वितीय स्फटिक नावों के माध्यम से विचरण कर रहे हैं। कहीं पर कुछ लोग और कुछ साधक बैठे–बैठे उस सम्पूर्ण दृश्य को अपने–आप में समेटने की क्रिया करते रहते हैं . . . सभी अपने–आप में मस्त हैं और आनन्द की अनुभूतियां करते रहते हैं, और वहां का वातावरण एक मनमोहक सुगन्ध से आप्लावित है।

वहां पर अपने–आप पूरा हृदय और पूरा शरीर ऐसे आनन्द से भर जाता है, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। हर क्षण उन ऋषियों, उन योगियों को देखने पर ऐसा लगता है, जैसे वास्तव में ही इनके सामने स्वर्ग तुच्छ है, नगण्य है . . . कोई समानता है ही नहीं। वहां की मिट्टी स्वर्णिम मिट्टी है, वहां के सुगन्धमय वातावरण में हजारों तरह के पुष्प . . . विविध आकर्षक रंगों के पुष्प झूमते हुए दिखाई देते हैं, जहां पर हिरण प्रसन्नता से कुलांचें भरते हैं, और कहीं किसी साधु और संन्यासी की पीठ को अपने सींगों से खुजाते हैं, तो कहीं पर कोई साधिका हिरण के बच्चे को अपनी गोद में लिये हुए बड़े मुग्ध भाव से उस दृश्य को देख रही होती है . . . कहीं पर हास्य चल रहा है. . . कहीं पर प्रवचन चल रहे हैं. . . तो कहीं पर साधु–संन्यासी ध्यान में बैठे हैं।

और जहां आप मीलों दूर तक सिद्धयोगा झील के किनारे–किनारे विचरण करते हुए आनन्द से भर जायेंगे . . . और आप सिद्धाश्रम में जायें, तो वहां का प्रत्येक दृश्य अपने–आप में एक–दूसरे से हटकर है। ऐसी इच्छा होती है, कि ये दृश्य हम हजारों वर्षों तक देखते ही रहें . . . प्रत्येक दृश्य अपने–आप में भाव पूर्ण होता है, जो मन को आप्लावित कर देता है, एक सुगन्ध से भर देता है, एक मस्ती से भर देता है। इसलिए इस सिद्धाश्रम को और उनके गुणों को, वहां के कल्पवृक्ष को, वहां के नृत्य को, वहां के देवताओं की

स्थितियों को, वहां के योगियों की स्थितियों को कुछ शब्दों के द्वारा व्यक्त नहीं किया जा सकता।

जो जीवन का आनन्द लेना चाहते हैं, जिनके जीवन का सौभाग्य होता है, जिनको जीवन में ऐसे गुरु प्राप्त हो जाते हैं, और जो कस कर अपने गुरु का हाथ पकड़ सकता है, वह निश्चय ही इस सम्पूर्ण आनन्द को अपने जीवन में, अपने तन–मन में, अपने अंग–अंग में उतार सकता है, देख सकता है, मस्त हो सकता है, नृत्य कर सकता है और मुग्ध हो सकता है।

वास्तव में ही वहां पर करोड़ों–करोड़ों तरह की विशेषताएं हैं, और इसीलिए कहा गया है –

''सिद्धाश्रमोऽयं स्वर्गं वदेवं तुच्छावतां पूर्णमदैव तुल्यं''

अर्थात् सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड और स्वर्ग सिद्धाश्रम के कण की भी तुलना नहीं कर सकते, क्योंकि वहां मृत्यु नहीं है, वृद्धावस्था नहीं है, जर्जरता नहीं है, कृशता नहीं है, दुर्बलता नहीं है, दीनता नंहीं है, दुःख नहीं है, दैन्य नहीं है, पलायन नहीं है, चिन्ताएं नहीं हैं। एक उमंग है, एक उत्साह है, एक उछाह है, एक यौवन है, एक सौन्दर्य है, एक मस्ती है, एक थिरकन है. . . देवता, संन्यासी और योगी यत्र–तत्र विचरण करते हुए मुग्ध भाव से एक–दूसरे को देखते हैं, और मस्ती में झूमते हुए अपने जीवन को पूर्ण आनन्द युक्त बनाये रहते हैं।

➛ ***गुरुदेव! मैंने कई ग्रंथों में सिद्धयोगा झील के बारे में बहुत कुछ पढ़ा है, कृपया उसके महत्व पर प्रकाश डालें?***

➛ तुमने यह प्रश्न करके मुझे कुछ क्षणों के लिए वापिस सिद्धाश्रम में मानसिक रूप से पहुंचा दिया है। सिद्धाश्रम में अनिर्वचनीय और अत्यधिक आनन्ददायक कोई स्थान है, तो वह सिद्धयोगा झील है, जो मीलों लम्बी चौड़ी है, और उसका जल स्फटिक के समान स्वच्छ, निर्मल और गहरा है। सैकड़ों फीट गहरी झील होते हुए भी यदि हम एक सिक्का उस झील में डालें, तो तलहटी में जाने पर भी उस सिक्के को हम स्पष्टता

से देख सकते हैं। इससे तुम कल्पना कर सकते हो, कि सिद्धयोगा झील का जल कितना स्वच्छ और दिव्य होगा। उसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है, कि सिद्धयोगा झील में स्नान करने पर शरीर की सारी कल्मषता, सारा मैल, छल, झूठ, कपट और जो जीवन की न्यूनताएं हैं, वे अपने–आप ही समाप्त हो जाती हैं।

दूसरी सबसे बड़ी विशेषता यह है, कि उस झील में स्नान करने से स्वतः ही साधक का कायाकल्प हो जाता है। स्वतः ही बुढ़ापा यौवन में परिवर्तित हो जाता है। स्वतः ही सारे शरीर की झुर्रियां मिट जाती हैं, बाल काले हो जाते हैं, शरीर का सन्तुलन अपने–आप सही हो जाता है, और ऐसा लगता है, जैसे पूरे शरीर का परिवर्तन हो गया हो, पूरे मन का परिवर्तन हो गया हो, पूरे जीवन का परिवर्तन हो गया हो। वास्तव में ही ऐसा जल और ऐसा स्थान, जहां पर हजारों हंस विचरण कर रहे हों, जहां पर स्वच्छ जल प्रवहित हो रहा हो, जिसके किनारे पर बैठने से एक अपूर्व शान्ति और आनन्द की अनुभूति हो रही हो, उस सिद्धयोगा झील का वर्णन तो वेदों में भी आया है।

स्वयं ब्रह्मा ने कहा है – "मैं अपने जीवन का सौभाग्य समझता हूं, कि मुझे सिद्ध योगा झील में स्नान करने का सुअवसर प्राप्त हुआ।" स्वयं मेनका, रम्भा या उर्वशी इसी प्रयत्न में रहती हैं, कि इसमें स्नान करके हम अपने यौवन को और अपने सौन्दर्य को अक्षुण्ण रख सकें। वास्तव में ही वहां जीवन की गुनगुनाहट है, जीवन की धड़कन है, जीवन की चेतना है, जीवन की मधुरता है. . . और उस सिद्धाश्रम में प्रवेश प्राप्त कर, सिद्धयोगा झील के किनारे बैठना ही, उसमें स्नान करना ही जीवन की श्रेष्ठता और पवित्रता का बोध कराता है।

इसलिए जितना महत्व सिद्धाश्रम का है, निश्चय ही उतना महत्व सिद्धयोगा झील का भी है, क्योंकि वह झील अत्यन्त पवित्र है, कायाकल्प करने में सक्षम है, और मृत्यु को अमृत्यु में बदलने के लिए उसका जल अपने–आप में पूर्ण साक्षीभूत रहा है। इसीलिए सिद्धाश्रम झील या सिद्धयोगा झील का वर्णन वेदों में भी, उपनिषदों में भी, पुराणों में भी,

देवताओं के मुख से भी और ऋषियों के मुख से भी बार–बार उच्चरित होता रहा है। उनकी यही आकांक्षा रहती है कि मैं साधना के उस आयाम को स्पर्श करूं, जिससे मैं सिद्धाश्रम जा सकूं, सिद्धयोगा झील में अवगाहन कर सकूं उसके किनारे बैठ सकूं, वहां के सुन्दर हंसों की किलोल देख सकूं, उसके किनारे नृत्य करती हुई साधिकाओं के नर्तन को अपने जीवन में उतार सकूं और उन योगियों को समाधिस्थ होते हुए, साधनाएं करते हुए देख सकूं।

➛ ***गुरुदेव! सिद्धाश्रम में. . . ऐसा सुना है, और कुछ ग्रंथों में ऐसा पढ़ने में आया है, कि वहां अनेकों अप्सरायें भाव नृत्य करती रहती हैं, जैसे रम्भा, मेनका, उर्वशी आदि, तो क्या यह सत्य है?***

➛ सिद्धाश्रम समस्त योगियों का आधारभूत स्थल है, और उन योगियों के लिए एक सामान्य साधिका में, रम्भा में, उर्वशी में, तिलोत्तमा में या मेनका में कोई अन्तर नहीं है, क्योंकि नृत्य सम्पूर्ण जीवन की उमंग है, उत्साह है। नृत्य से व्यक्ति जमीन से ऊपर उठता हुआ गुरुत्वाकर्षण से मुक्त हो जाता है, क्योंकि जमीन पर खड़ा हुआ व्यक्ति नृत्य नहीं कर सकता. . . और यह भाव प्रबल नृत्य इस बात का साक्षी है, कि व्यक्ति के मन में उछाह है, उत्साह है, जोश है, क्षमता है, प्रवाह है, एक नदी की तरह छलछलाती हुई गतिशीलता है।

इसीलिए देवता भी उस सिद्धाश्रम में आने के लिए लालायित रहते हैं, तथा विचरण करते रहते हैं। वे अप्सरायें भी वहां आने के लिए लालायित रहती हैं . . . और जिस प्रकार से मैं आपको देख सकता हूं या आप मुझे देख सकते हैं, या जिस प्रकार से हम एक–दूसरे से बात कर सकते हैं, ठीक उसी प्रकार से सशरीर हम उनको स्पर्श कर सकते हैं, उनसे बात कर सकते हैं, उनका नृत्य देख सकते हैं।

एक पूर्ण शुद्ध शास्त्रीय नृत्य ब्रह्माण्ड में केवल अप्सरायें ही कर सकती हैं, क्योंकि नृत्य की उत्पत्ति ही उनके नूपुरों के माध्यम से हुई

है, और वे समय–समय पर जब भी सिद्धाश्रम में कुछ विशिष्ट दिवस गुरु पर्व, गुरु पूर्णिमा, सिद्धाश्रम दिवस, चैतन्य दिवस होते हैं, तब स्वयं उनकी यह आकांक्षा रहती है, कि हम सिद्धाश्रम में सम्पन्न हो रहे दिव्योत्सव पर, अद्भुत और अनिवर्चनीय नृत्य प्रस्तुत कर सकें. . . और वे नृत्य करती हैं, विचरण करती हुई देखी जा सकती हैं. . . वहां के लिए यह कोई अनहोनी घटना नहीं है। वहां के लिए यह कोई अद्भुत करिश्मा नहीं है।

उनके शब्दों में भी यह स्पष्ट है – "सिद्धाश्रम के सामने तो स्वर्ग और इन्द्र लोक भी अपने–आप में अत्यन्त नगण्य और तुच्छ हैं, क्योंकि जो सहज प्रवाह, जो आनन्द, जो मस्ती, जो चैतन्यता सिद्धाश्रम में है, वह स्वर्ग में भी सम्भव नहीं है, वह इन्द्र लोक में भी सम्भव नहीं है।"

इसीलिए उनकी भी इच्छा रहती है, कि वे वहां आयें, उनकी भी इच्छा रहती है, कि वे वहां नृत्य करें, उनकी भी इच्छा रहती है, कि वे अद्भुत गतिशीलता को प्राप्त कर सकें . . . और उन महान सिद्धियों के स्वामी, योगियों का आशीर्वाद प्राप्त कर सकें, जिससे कि वे अद्वितीय यौवनवती बनी रह सकें, अद्वितीय सौन्दर्यमयी बनी रह सकें तथा उनके नृत्य में और अद्भुत, निखार आ सके। इसलिए वे समय–समय पर वहां आती रहती हैं, और अपने नृत्य के माध्यम से, अपने गायन के माध्यम से, अपने संगीत के माध्यम से वहां के वातावरण को गुंजरित करती रहती हैं।

➛ ***क्या कोई भी स्त्री, पुरुष, साधक या साधिका सिद्धाश्रम में प्रवेश प्राप्त कर सकता है, वहां साधना सम्पन्न कर सकता है और क्या वह वापिस इस जीवन में, इस संसार में, इस समाज में आ सकता है?***

➛ इसका उत्तर स्वीकृति में है। कोई भी व्यक्ति या स्त्री, कोई भी साधक या साधिका निश्चय ही सिद्धाश्रम में जा सकते हैं, वहां जितना समय चाहें रह सकते हैं, सिद्धयोगा झील में स्नान कर रोग रहित और

मृत्यु रहित बन सकते हैं, और जब वे चाहें वापिस इस देश में, इस संसार में, इस समाज में आ सकते हैं, इसी शरीर से।

इसके लिए शरीर बदलने की कोई आवश्यकता नहीं है। ऐसा भी नहीं है, कि यह केवल एक कल्पना या अनुभूति है, ऐसा भी नहीं है, कि किसी सूक्ष्म शरीर या प्राण को ही वहां भेजा जा सकता है, और यह शरीर यहीं बना रहे। जो हमारा शरीर है, जितना हमारा आकार-प्रकार है, इस पूरे शरीर को हम सिद्धाश्रम में ले जा सकते हैं या दूसरे शब्दों में हम चलकर, गतिशील होकर सिद्धाश्रम में पहुंच सकते हैं। जो हमारा शरीर है, जो हमारे हाथ-पांव हैं, जो हमारी चेतना है, जो हमारा मस्तिष्क है, उसके माध्यम से उस सिद्धाश्रम को परखा जा सकता है, देखा जा सकता है, वहां का आनन्द लिया जा सकता है, और वहां की विशेषताओं को अपने-आप में समेटा जा सकता है। भौतिक दृष्टि से वह सब कुछ प्राप्त किया जा सकता है, जो मानव की इच्छा रही हो।

वहां जाकर व्यक्ति साधना सम्पन्न कर सकता है, यज्ञों में भाग ले सकता है, देवताओं के दर्शन कर सकता है, अप्सराओं के नृत्य और सुन्दरियों के हाव-भाव को अनुभव कर सकता है, पहिचान सकता है. . . और ऐसा होना ही चाहिए, कि हम कृष्ण के साक्षात् विग्रह को देखें, उनको पहिचानें, भीष्म के पास रहें, कृपाचार्य का अनुभव करें, राम और बुद्ध को देख सकें, अनुभव कर सकें, शंकराचार्य के पास बैठ कर संन्यास की और साधना की बारीकियों को सीख सकें, और परम पूज्य गुरुदेव "स्वामी सच्चिदानन्द जी" के दर्शन कर जीवन को धन्य कर सकें, जीवन को पूर्णता दे सकें, जीवन में आनन्द की वृष्टि कर सकें।

यह सब कुछ सम्भव है, और ऐसा कई सामान्य मनुष्यों ने किया है, जो आपके और हमारे बीच के हैं, जिनकी उपस्थिति मेरे और आपके बीच में रही है, जो इसी समाज के व्यक्ति हैं, जो आपकी ही तरह हाड़-मांस से निर्मित हैं, वे सिद्धाश्रम में गये हैं, और सिद्धयोगा झील में स्नान कर अपने जीवन को पूर्णता देने में समर्थ हो सके हैं, तथा

योगियों के दर्शन कर अपने जीवन को कृतार्थ कर सके हैं, और वापिस इसी देह से इस समाज में आ सके हैं। यदि वे ऐसा कर सकते हैं, तो आप भी ऐसा कर सकते हैं।

➛ *किन विधियों से या किन तरीकों से सिद्धाश्रम में प्रवेश किया जा सकता है?*

➛ यह कार्य बहुत कठिन और असम्भव नहीं है, अत्यन्त सहज और सरल है। इसके दो प्रकार हैं, एक प्रकार तो साधना के माध्यम से है, जब साधक गुरु से "सिद्धाश्रम दीक्षा" प्राप्त करे और पूरे शरीर में सिद्धाश्रम दीक्षा का संचरण करे।

यह दीक्षा अपने–आप में सामान्य और सरल नहीं होती। यह तो जब आपके मन में हिलोर उठे, गुरुदेव से प्रार्थना करें, उनके पास उपस्थित हों और उनकी कृपा से ऐसी दीक्षा प्राप्त हो, जिससे कि यह सारा शरीर सिद्धाश्रम में जाने योग्य बन सके।

जब ऐसी दीक्षा सम्पन्न हो जाय, तब गुरुदेव के बताये हुए तरीके से, साधना विधि से उस स्थिति को प्राप्त करें, जिसके माध्यम से सशरीर सिद्धाश्रम में पहुंचा जा सकता है। यह कोई कठिन कार्य नहीं है, थोड़ा परिश्रम, थोड़ा प्रयत्न तो करना ही पड़ता है . . . और केवल इतना ही करना है, कि जब सिद्धाश्रम दीक्षा सम्पन्न हो जाय, तो गुरुदेव के द्वारा बताई हुई विधि से दस महाविद्याओं में से तीन महाविद्याएं सिद्ध कर लें, जिससे कि उन महाविद्याओं को अपने सामने प्रत्यक्ष कर सकें।

प्रत्येक महाविद्या को सिद्ध करने का एक तरीका है, जिस विधि के द्वारा साधना व मंत्र–जप सम्पन्न करने से महाविद्याएं सिद्ध होती ही हैं, और वे महाविद्याएं, चाहे वह बगलामुखी हो, कमला हो, छिन्नमस्ता हो, धूमावती हो या काली हो, सामने प्रत्यक्ष होती ही है। जब तीन महाविद्याएं सिद्ध हो जाती हैं, तब उस साधक को वह क्षमता प्राप्त हो जाती है, जिसके माध्यम से वह स्वयं अपनी इच्छा–शक्ति के द्वारा सशरीर सिद्धाश्रम में जा सकता है, वहां विचरण कर सकता

है, जब तक इच्छा हो, तब तक वहां रह सकता है और पुनः इच्छा होने पर इस समाज में आ सकता है।

एक दूसरा प्रकार भी है, जिसके माध्यम से सिद्धाश्रम में प्रवेश पाया जा सकता है, वह है "सिद्धाश्रम साधना।" पहले साधक गुरुदेव से सिद्धाश्रम दीक्षा प्राप्त करे और अपने सारे शरीर में सिद्धाश्रम स्थापना करे, अपनें शरीर को चेतना युक्त बनाए, ऊर्जा युक्त बनाए। इसके बाद गुरुदेव की बताई हुई विधि से सिद्धाश्रम साधना को पूर्ण मनोयोग पूर्वक सम्पन्न करे, जिसमें साधक को "सिद्धाश्रम यंत्र" पर सिद्धाश्रम प्राणश्चेतना प्रयोग, सिद्धाश्रम ऊर्जा प्रयोग, प्राण वायु प्रयोग सम्पन्न करना होता है। इससे सारा शरीर दिव्य और चैतन्य बन जाता है, और स्वतः ही ऐसी सिद्धि प्राप्त हो जाती है, जिसके माध्यम से साधक सिद्धाश्रम में प्रवेश पा सकता है। मात्र 11 लाख मंत्र–जप के द्वारा इस प्रकार की अलौकिक सिद्धि को प्राप्त किया जा सकता है।

यह तरीका भी सरल और शास्त्रोचित है और कई साधकों ने इस क्रिया को संम्पन्न किया है, जिसके माध्यम से वे सिद्धाश्रम में जा सके हैं, वहां का आनन्द ले सके हैं। इसके लिए आवश्यकता है दृढ़ निश्चय की, आवश्यकता है इस चिन्तन की, कि मुझे हर हालत में, हर स्थिति में गुरुदेव की सामीप्यता प्राप्त करनी ही है, उनसे 'सिद्धाश्रम दीक्षा' लेनी ही है, उनसे 'सिद्धाश्रम साधना' प्राप्त करनी ही है, और इस साधना को पूर्णता के साथ सम्पन्न करना ही है। जब साधक ऐसा निश्चय कर लेता है, तो फिर उसे मार्ग में किसी प्रकार की कोई रुकावट या बाधा व्याप्त नहीं होती, फिर उसके मार्ग में किसी प्रकार की कोई अड़चन आती ही नहीं, फिर तो उसका मार्ग अपने–आप में ही प्रशस्त और सरल हो जाता है, क्योंकि गुरुदेव की उपस्थिति तो प्रत्येक क्षण उसके साथ रहती ही है।

और तीसरा एक और प्रकार है, जिसके माध्यम से भी सिद्धाश्रम में प्रवेश पाया जा सकता है, वह है गुरु के साथ सिद्धाश्रम में प्रवेश करने की स्थिति। पर इसके लिए यह जरूरी है, कि वह शिष्य

हो और इससे भी ज्यादा जरूरी है, कि वह सेवा के माध्यम से गुरु की कृपा प्राप्त करे।

सेवा का तात्पर्य है – गुरुदेव की जो इच्छा हो, उसे पूर्णता दे, उनके बताए हुए कार्यों को सम्पन्न करे। वे कौन–सा कार्य सौंपते हैं, किस तरीके से सौंपते हैं, यह तो वे जानें। शिष्य उसमें व्यवधान नहीं डाले, ना–नुच नहीं करे, इस प्रकार के कार्यों में तर्क–वितर्क नहीं करे, जो वे कहें, उसे पूर्णता के साथ और मनोयोग पूर्वक करे. . . पर इसके लिए यह जरूरी है, कि गुरु वह हो, जो सिद्धाश्रम में गया हुआ हो, जिसको सिद्धाश्रम में जाने का ज्ञान हो, वही तो अपने शिष्य को सिद्धाश्रम में ले जा सकता है। प्रत्येक गुरु के लिए यह सम्भव नहीं होता, कि वह अपने शिष्य को सिद्धाश्रम ले जा सके, क्योंकि जो स्वयं सिद्धाश्रम नहीं जा सकता, वह दूसरों को कैसे ले जायेगा। स्वयं जिसमें चेतना नहीं है, वह दूसरों को कैसे चेतना दे सकता है।

पाखण्ड और ढोंग से, प्रदर्शन और दिखावे से तो सिद्धाश्रम में प्रवेश नहीं पाया जा सकता। इसके लिए तो ऐसे सशक्त गुरु की जरूरत है, जो सिद्धाश्रम में प्रवेश पा चुका हो, जो इससे पहले भी अपने शरीर के साथ सिद्धाश्रम में विचरण कर चुका हो . . . और यदि जीवन में ऐसे गुरु मिल जायें, तो फिर एक क्षण भी चूकना उचित नहीं है। जीवन के जिस मोड़ पर भी वे मिल जायें, जीवन की जिस स्थिति मे भी ऐसे गुरु दिख जायें, तो दौड़ कर उनके चरणों से एकाकार हो जाना हीं जीवन की प्रामाणिकता है।

और ऐसी स्थिति आने पर वह केवल गुरु सेवा के द्वारा ही उस स्थिति को प्राप्त करता है, जो साधना के द्वारा प्राप्त होती है, फिर उसे मंत्र–जप की जरूरत नहीं होती, फिर उसे साधना की जरूरत नहीं होती, फिर उसे महाविद्याएं सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि गुरु में तो समस्त महाविद्याएं स्वतः समाहित होती हैं।

गुरु तो ब्रह्मा, विष्णु और महेश से भी ऊपर है, और जब गुरु उस शिष्य की सेवा से प्रसन्न हो जाता है, जब उसे यह विश्वास हो

जाता है, कि इसने सेवा के द्वारा उस स्थिति को प्राप्त कर लिया है, जो साधक की स्थिति होती है, तब गुरु उसे अपनी प्राणश्चेतना के द्वारा, शक्तिपात के द्वारा एक विशेष प्रकार की ऊर्जा प्रदान करता है, जिसके माध्यम से उस शिष्य की सारी चेतना, सारा शरीर प्राणवान और वेगवान हो जाता है, और तब वह शिष्य या शिष्या सशरीर सिद्धाश्रम में विचरण कर सकती है। उसे भी वही स्थिति प्राप्त होती है, जो वहां के साधक को प्राप्त होती है। उसे वह क्रिया प्राप्त होती है, जिसके माध्यम से वह जितना समय चाहे सिद्धाश्रम में व्यतीत कर सकता है. . . और ऐसा शिष्य सेवा के द्वारा, गुरुदेव के शक्तिपात के द्वारा, गुरुदेव के द्वारा प्रदान की हुई प्राणश्चेतना के द्वारा अपने सारे शरीर को वेगवान बना कर गुरुदेव के साथ ही अपने पूरे शरीर और चेतना के साथ सिद्धाश्रम में प्रवेश पा सकता है . . . और देख सकता है उस सिद्धाश्रम को, जो देवताओं के द्वारा वन्दनीय है।

ऐसा शिष्य सिद्धयोगा झील में स्नान कर उस परम सत्य की अनुभूति कर सकता है, जिसे 'ब्रह्म' कहा गया है, जिसे 'अलौकिक' कहा गया है, जिसके द्वारा जीवन की पूर्णता प्राप्त की जा सकती है, जिसे शास्त्रों में और वेदों में "पूर्णमदः पूर्णमिदं . . . " कहा है, क्योंकि जीवन की पूर्णता तो सिद्धाश्रम में प्रवेश करने पर ही सम्भव है।

और यह तीसरा प्रकार ज्यादा सरल है, ज्यादा सहज है, ज्यादा सम्भव है, पर यह सेवा किसी स्वार्थ से प्रेरित नहीं हो। जब शिष्य आकांक्षा लेकर सेवा करता है, तो उसमें स्वार्थ की दुर्गन्ध आती है। वह जो भी कार्य करे सेवा-भावना से करे, उसमें किसी प्रकार का छल या दिखावा न हो। मन में किसी प्रकार का सन्देह और भ्रान्ति न हो। मन में किसी प्रकार का कपट और असत्य न हो। वह जो कुछ भी करे मनोयोग पूर्वक करे।

ऐसे शिष्य का सौभाग्य होता है, कि गुरु के चरण उसे प्राप्त हों, वह उनके चरणों को स्पर्श करे। उनके शरीर को मन्दिर समझे। उनके प्राणों को देवता स्वरूप समझे। उनकी आज्ञा को वेद वाक्य अनुभव

करे, और जो कुछ कार्य करे, उसे आनन्द और उत्साह के साथ करे, प्रेरणा और उमंग के साथ करे। ऐसा नहीं हो, कि मन में कपट हो, छल हो, दिखावा हो, मुर्दनी हो या निराशा हो, क्योंकि ऐसा किया गया कार्य या आज्ञा–पालन भी व्यर्थ हो जाता है।

आज्ञा–पालन तो उत्साह के साथ होता है, उमंग के साथ होता है, जोश के साथ होता है . . . और जब ऐसा क्षण प्राप्त हो, तो शिष्य को अपना सौभाग्य समझना चाहिए, कि उसे गुरुदेव की सामीप्यता मिली, उनके साथ रहने का अवसर मिला।

ऐसा अवसर तो करोड़ों लोगों में से किसी एक या दो, चार या छः को ही तो प्राप्त हो सकता है, करोड़ों लोग तो उनके साथ नहीं रह सकते। वे तो केवल देख सकते हैं, वे तो केवल गुरु मंत्र–जप कर सकते हैं, वे उनकी उपस्थिति का एहसास नहीं कर सकते हैं, वे हर क्षण उनके साथ नहीं रह सकते।

और जब ऐसी सेवा शिष्य के जीवन में उतर जाती है, तो उसे गुरु कृपा अपने–आप ही प्राप्त हो जाती है। फिर वह जीवन में पूर्णता प्राप्त कर सिद्धाश्रम में प्रवेश पा सकता है। ऐसा ही जीवन आशीर्वाद युक्त जीवन होता है।

➛ ***पूज्य गुरुदेव! जैसा कि आपने बताया, सिद्धाश्रम में कोई भी व्यक्ति सशरीर जा सकता है, लेकिन उसे गुरु की आवश्यकता होती है। ऐसे महान गुरु की हम कैसे पहिचान करेंगे और कैसे उनकी कृपा प्राप्त हो सकती है?***

➛ मैं सोचता हूं, कि सबसे कठिन प्रश्न यही है . . . कठिन प्रश्न इसलिए है, कि आज ही नहीं, अगर हम पिछले पच्चीस हजार वर्षों का लेखा–जोखा करें, तो बहुत ही कम योगी या साधक सिद्धाश्रम में जा सके हैं, क्योंकि आम साधक, आम योगी या आम संन्यासी सिद्धाश्रम में नहीं जा सकते। वहां जाने के लिए आवश्यक है कि साधक को ब्रह्म तत्त्व को जानने की योग्यता प्राप्त हो, क्योंकि ईशावास्योपनिषद में कहा

है, कि "पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते" जो व्यक्ति स्वयं पूर्ण है, वही पूर्णता तक पहुंच सकता है।

जहां तक मेरा अनुभव है, मैं सोचता हूं, कि इस भारतवर्ष में ऐसे सैकड़ों पाखण्डी, ढोंगी, आश्रम के संचालक और व्यवस्थापक होंगे, जो इस बात का दावा करते होंगे, कि हम सिद्धाश्रम जा चुके हैं, और मेरी पुस्तकों को पढ़ने के बाद या मेरे प्रवचनों को सुनने के बाद शायद लाख–दो–लाख व्यक्ति तो इस प्रकार के साधु हो ही गए हैं, जो सिद्धाश्रम जाने की भावना व्यक्त करते हैं, और अपने शिष्यों को यह कहते हैं, कि मैं सिद्धाश्रम में गया हूं, मैं जा सकता हूं . . . मगर ऐसा सम्भव नहीं है, क्योंकि तुम्हारे पास अगर सतर्क निगाहें हैं, अगर तुम्हारे अंदर उन भावों को पकड़ने की क्षमता है, तो ऐसे गुरु को पहिचान सकते हो। उस गुरु को पहिचानने की तीन–चार स्थितियां ही हैं, जिससे सामान्य व्यक्ति उस गुरु को पहिचान सकता है।

एक तो, अपने–आप में ही उसका चेहरा, उसका व्यक्तित्व, उसकी पर्सनॉलिटि उसे दूसरे व्यक्ति से भिन्न कर देती है। ऐसा एहसास होता है, कि यह अद्‌भुत और अनिर्वचनीय व्यक्तित्व है। ऐसा लगता है, कि यह अलग हट कर है। ऐसा लगता है, कि यह आम व्यक्ति नहीं है, कुछ इसमें ऐसा है, जो आकर्षण युक्त है, क्योंकि ऐसे व्यक्तित्व में और उसके पूरे शरीर में एक आकर्षण होता है।

दूसरा, सामान्यतः कोई भी साधु, या कोई भी संन्यासी, या कोई भी व्यक्ति किसी एक विषय पर ही बोल सकता है। अगर वह गीता पर बोलेगा, तो जिन्दगी भर वह गीता पर ही बोलेगा। अगर रामायण पर बोलेगा, तो वह जिन्दगी भर रामायण पर ही बोलेगा किंतु यथार्थ गुरु इनसे भिन्न होता है क्योंकि पूरे वेद, पूरे शास्त्र, पूरे पुराण, पूरे उपनिषद उसी को कंठस्थ हो सकते हैं, और वह कहीं से भी, किसी भी शास्त्र का उदाहरण दे सकता है, जब सरस्वती स्वयं साक्षात् रूप में उसके कंठ में स्थापित हों, तभी वह किसी भी विषय पर धाराप्रवाह बोल सकता है . . . फिर यदि उसे अणु विज्ञान पर बुलवाना चाहें, तो बोल सकता

है, और यदि वेद पर बुलवाना चाहें, तो बोल सकता है, और यदि किसी और विज्ञान या किसी और विषय पर बुलवाना चाहें, तो उस पर भी वह धाराप्रवाह बोल सकता है। मेरे कहने का तात्पर्य यह है, कि जो प्रत्येक विषय में अद्वितीय बोलने की क्षमता रख़ता हो।

और तीसरी कसौटी, इस प्रकार के व्यक्तित्व की सबसे बड़ी विशेषता यह है, कि उसके पूरे शरीर से एक सुगंध सी प्रवाहित होती है, जिसे 'अष्टगंध' कहते हैं। यदि आपने पुराणों में पढ़ा हो, तो जब पहली बार राधा, कृष्ण से मिलीं ओर ज्यों ही उनके पूरे शरीर में समाहित हुईं, तो राधा ने छिटक करके कहा – 'आपके शरीर से तो एक ऐसी सुगन्ध प्रवाह्हित हो रही है, जिससे मैं अपने आप मे ही सम्मोहित हो रही हूं, अपने आप में डूब रही हूं।' वेद व्यास ने भी कहा है – 'कृष्णो वतां च गन्धेसतः पूर्वः' कृष्ण के आगमन का ज्ञान उनके शरीर से निःस्सृत्त अष्टगंध के प्रवाह से हो जाता है और अष्टगंध अपने आप में एक दिव्य सुगन्ध है, जिसकी किसी इत्र से कल्पना नहीं कर सकते, जिसका किसी सुगन्ध से मेल नहीं होता।'

उनके पूरे शरीर में से एक अलग ढंग की सुगन्ध चौबीसों घण्टे प्रवाहित होती रहती है। उससे हम जान सकते हैं, कि यह व्यक्ति, यह योगी सिद्धाश्रम जा सका है या सिद्धाश्रम से वापिस आया हुआ है, क्योंकि अत्यन्त पवित्र, दिव्य और सोलह कला पूर्ण व्यक्तित्व के शरीर से ही अष्टगंध प्रवाहित होती है, और ऐसा व्यक्ति सूक्ष्म शरीर से किसी के घर में जब जाता है, तो हमारी ये आंखें, जो चर्म–चक्षु हैं, उसको देख तो नहीं पाते, मगर वह सुगन्ध शरीर में और घर में व्याप्त हो जाती है, और उससे यह एहसास हो जाता है, कि शायद वह व्यक्ति हमारे घर में आया है, वह गुरु हमारे घर में आया है। गुरु एक सुगन्ध का झोंका होता है. . . और उसके शरीर से निकलती हुई सुगन्ध से अपने–आप में समाधि की अवस्था प्राप्त हो जाती है, तन्मयता की अवस्था प्राप्त हो जाती है।

इस प्रकार के व्यक्तित्व को अपने–आप में समेट लेने की क्रिया, अपने–आप में पूर्णता देने की क्रिया भी अपने में श्रेष्ठतम तपस्या होती

है, जिसमें श्रेष्ठता होती है, जिसका भाग्योदय होता हैं, वह ही ऐसे गुरु को पहिचान सकता है, क्योंकि हमारे कुतर्क, हमारी बुद्धि, हमारा कुमार्ग बाधक बनता है, जिसके कारण हम उसको नहीं पहिचान पाते, एक प्रकार से यह हमारा दुर्भाग्य ही होता है।

ऐसे व्यक्ति की पहिचान है कि वह अपने–आप में सम्पूर्ण विषयों को जानने वाला, सम्पूर्ण योगियों में श्रेष्ठ, तंत्र में, मंत्र में, दर्शन में, मीमांसा में, शास्त्रों में, वेदों में, पुराणों में, चिन्तन में, हास्य और विनोद सभी क्षेत्रों में अपने–आप में अद्वितीय हो। उसे देखकर ऐसा लगे, जैसे कहीं से भी किसी प्रकार की कोई न्यूनता नहीं है। बोलने में लगे, जैसे साक्षात् सरस्वती उसके कंठ से प्रवहित हो रही है। हास्य में ऐसा लगे, कि शायद इससे ज्यादा हास्य पैदा करने वाला कोई हो ही नहीं सकता। वह व्यक्ति अपने धाराप्रवाह प्रवचनों के माध्यम से एक क्षण में अपने सामने उपस्थित समुदाय को हंसा सकता है और दूसरे ही क्षण में रुला भी सकता है। वह अपने शब्दों के माध्यम से नृत्य करवा सकता है, ऐसा व्यक्तित्व करोड़ों व्यक्तियों में से किसी एक का ही होता है, और ऐसे व्यक्तित्व से ही यह पहिचान हो सकती है, कि क्या यह व्यक्ति सिद्धाश्रम में गया हुआ है?

और यदि जीवन में ऐसा गुरु मिल जाय, वह चाहे साधारण वस्त्र में हो, वह चाहे लंगोटी पहिने हो, वह चाहे गृहस्थ में हो, तो इससे बड़ा सौभाग्य जीवन का कुछ हो ही नहीं सकता। इसलिए जीवन की सारी खोज, जो योगी हैं, यति हैं, संन्यासी हैं, जो पच्चीस–पचास वर्षों से साधनाएं कर रहे हैं, उनकी आकांक्षा है, कि ऐसा गुरु मिले, और फिर गुरु हमें स्वीकार करें, ये दोनों स्थितियां हों . . . और फिर उस सुगन्ध से आप्लावित हो करके उनके चरणों को छूने से, उनके शरीर को स्पर्श करने से और अपने ज्ञान के माध्यम से उनके शरीर को अपने शरीर में समाहित कर देने से, वह खुद सुगन्धमय बन जाता है।

ऐसा व्यक्तित्व, जिसके कंठ में सरस्वती विराजमान हो, जो हजारों–लाखों लोगों के सामने धाराप्रवाह मंत्रों का, श्लोकों का उच्चारण कर सकता हो, समस्त पुराणों का, वेदों का, शास्त्रों का, उपनिषदों का

यथा स्थान उद्धरण दे सकता हो, जिसको पुस्तक के ज्ञान की, चिन्तन की आवश्यकता नहीं हो, जो किसी भी विषय पर धाराप्रवाह बोल सकता हो, जो पूर्ण पुरुष हो, जो अद्वितीय व्यक्तित्व सम्पन्न हो, और जिसके शरीर से अष्टगंध प्रवहित होती हो। ऐसे व्यक्ति की पहिचान ही यही है, जिससे स्पष्ट होता है कि वह व्यक्ति सिद्धाश्रम गया हुआ है या सिद्धाश्रम से लौटा हुआ है।

➻ *प्रभु! उस अद्वितीय, अनिर्वचनीय सिद्धाश्रम के संस्थापक कौन हैं?*

➻ तुमने यह जो प्रश्न किया है, वह मेरी जिन्दगी का, मेरे जीवन का श्रेष्ठतम प्रश्न है, क्योंकि जो सिद्धाश्रम के संस्थापक हैं, और जिनको देवता भी पूजते हैं, अप्सरायें जिनके सामने नृत्य करके अपने–आप को धन्य अनुभव करती हैं, कृष्ण भी जिनके सामने नतमस्तक हैं, ऐसे ही हजारों वर्षों की आयु प्राप्त "परमहंस स्वामी सच्चिदानन्द जी" इस सिद्धाश्रम के संस्थापक हैं, संचालक हैं, और वे मेरे अत्यन्त आदरणीय एवं श्रेष्ठतम गुरु हैं। मैंने उनसे दीक्षा प्राप्त की है, और मैं सोचता हूं, कि यह मेरे सम्पूर्ण जीवन का सौभाग्य है, कि वे गुरु रूप में मुझे प्राप्त हो सके हैं, क्योंकि उन्होंने अपने पूरे जीवन में केवल तीन ही शिष्य बनाये, पिछले पच्चीस हजार वर्षों में और उनमें एक मेरा चयन होना भी अपने–आप में, मैं तो अपने जीवन की पूर्णता और श्रेष्ठता मानता हूं।

मैं उनका स्मरण करता हूं, तो स्वतः मेरे हृदय से भाव प्रसंग व्यक्त होने लग जाते हैं।

गुरुमेव नित्यं प्रणम्यं वदं वं, हृदयं वदां वै चिन्त्यं विचिन्त्यम्।
आतुर्यमाणं गुरुदेव नित्यं, प्रणम्यं प्रणम्यं प्रणम्यं प्रणम्यम्।।

जो मेरे हृदय में स्थापित हैं, जिन्होंने अत्यन्त कृपा पूर्वक मुझे शिष्य रूप में स्वीकार किया तथा सिद्धाश्रम को सही ढंग से संचालित करने का भार मुझे सौंपा है, और मुझे यह आदेश दिया, कि मैं संसार

में जाकर अन्य शिष्यों को भी श्रेष्ठता दे सकूं, पूर्णता दे सकूं, यह उनकी महती कृपा है. . . और मैं हर क्षण उनको अपने हृदय में स्थापित करता हुआ पूर्णरूप से उनके हृदय में स्थापित हूं। ऐसे गुरुदेव, जो कि सिद्धाश्रम के संचालक हैं, जिनको समस्त योगीजन "स्वामी सच्चिदानन्द जी" के नाम से पुकारते हैं, वे अपने–आप में ही हजारों वर्षों की आयु प्राप्त तपस्वी, तेजस्वी गुरुदेव हैं, उनके दर्शन मात्र से ही सारा शरीर व रोम–रोम पुलकित, प्रफुल्लित, रोमांचित और आनन्दित हो जाता है। मैं ऐसे गुरुदेव को पूर्ण हृदय से, श्रद्धा से प्रणाम करता हूं।

➛ ***गुरुदेव जी! आपने बताया, कि परम पूज्य स्वामी सच्चिदानन्द जी की आयु हजारों वर्षों की है, परन्तु उन्होंने इतनी लम्बी अवधि में सिर्फ तीन ही शिष्य क्यों बनाये? इस पर आप प्रकाश डालें।***

➛ इसका उत्तर देना व्यक्तिगत सा हो जायेगा। तीन शिष्य इसलिए बनाये . . . हो सकता था, कि वे सौ शिष्य बना लेते, हो सकता था, कि वे पांच हजार शिष्य बना लेते, मगर पिछले पचास हज़ार वर्षों में . . . पचास हजार वर्ष तो एक बहुत लम्बी अवधि है, उसमें भी उन्होंने अगर तीन शिष्यों का ही चयन किया, तो उनकी शिष्यता को परखने की कसौटी अपने–आप में अत्यन्त कठोर है . . . इतनी अधिक कठोर है, कि तलवार पर चलना तो शायद बहुत अधिक आसान है, मगर उनकी शिष्यता प्राप्त करना, उनकी कृपा प्राप्त करना बहुत ही दुष्कर और कठिन है . . . और यह मेरा अहोभाग्य है, कि मैं उनका शिष्य बनने का सौभाग्य प्राप्त कर सका।

मुझे यह भी मालूम है, कि इस शिष्यता को प्राप्त करने के लिए मुझे कितना अधिक घोर परिश्रम और तपस्या करनी पड़ी, किस प्रकार प्रकृति के बीच अपने–आप को स्थापित करना पड़ा। मैं सोचता हूं, कि तपस्या के जितने भी प्रकार होते हैं, उन सब प्रकारों में पूर्णता प्राप्त करता हुआ उस सम्पूर्ण ब्रह्म को अपने–आप में स्थापित करके दिखा

सका, कि मैं उनके लिए एक सही शिष्य हो सकता हूं।

ब्रह्म में लीन हो जाना एक अलग प्रक्रिया है और ब्रह्म को अपने–आप में स्थापित कर देना बिलकुल एक अलग प्रक्रिया है, जो कि अत्यन्त दुष्कर है। जब भी कोई शिष्य उनकी आंखों में उस दिव्य–दृष्टि से देखता है, तो उसको अपना चेहरा, पूरा संसार और पूरा ब्रह्माण्ड दिखाई दे सकता है। जिस प्रकार कृष्ण ने ज्यों ही यशोदा के सामने मुंह खोला तो उनको सारा ब्रह्माण्ड कृष्ण के मुंह में दिखाई दे सका, वह पूरे ब्रह्माण्ड को अपने–आप में समाहित करने की क्रिया थी, इसलिए मैंने कहा, कि यह प्रश्न व्यक्तिगत हो जायेगा, मगर उन्होंने इससे पहले शायद हजार बार मेरी परीक्षा ली होगी, हजार बार कठिन से कठिन तपस्या करने की आज्ञा दी होगी। इस संसार में, उस दिव्याश्रम में से मुझे यहां भेज दिया गया, और उनसे दूर होने की अत्यधिक वेदना के बावजूद भी जो मेरा उद्देश्य, कर्त्तव्य है, वह मैं सम्पन्न करता जा रहा हूं।

साधक के समक्ष कई अनुकूल या प्रतिकूल स्थितियां उत्पन्न होती हैं, और उन सारी स्थितियों का पूर्ण निचोड़ यह होता है, कि वह अपने–आप में पूर्ण समर्पित हो, तथा ब्रह्माण्ड के भू लोक, मह लोक, जन लोक, तप लोक और समस्त लोकों को अपने–आप में समाहित करने की क्रियाएं और साधनायें सम्पन्न की हों, हिमालय में उस बर्फीले स्थान पर, जहां चारों तरफ बर्फ के अलावा कुछ है ही नहीं, जहां पर वायु भी बर्फ के तूफान की तरह बहती है, वहां अडिग रह करके उन साधनाओं को सम्पन्न कर सके, और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को अपने–आप में लीन कर सके, ऐसी साधना अत्यन्त ही दुष्कर है. . . और जो ऐसी साधना सम्पन्न करने के बावजूद भी नम्रता पूर्वक रह सके, अहंकार नहीं हो, अपने–आप में पूर्ण सात्विक जीवन व्यतीत कर सके, और माया के द्वारा अपने शिष्यों को यह एहसास करा सके, कि मैं तो एक बहुत ही सामान्य व्यक्ति हूं, जो निरंकारी है, जिसमें अंहकार नहीं है।

शायद ये सभी कसौटियां मेरे गुरु की रही होंगी, और इन

कसौटियों पर परखने के बाद ही उन्होंने मुझे अपना शिष्यत्व प्रदान करने योग्य पात्र समझा होगा . . . और मैं तो इसे अपने जीवन का सौभाग्य समझता ही हूं, क्योंकि जिनको प्राप्त करने के लिए, जिनके पास बैठने के लिए द्रोणाचार्य, भीष्म, कृपाचार्य, उच्चकोटि के संन्यासी और योगी भी तरसते हैं, उन्होंने मुझे अपने शिष्य के रूप में स्वीकार किया और दीक्षा दी . . . इससे बड़ा सौभाग्य और कुछ हो ही नहीं सकता . . .

मगर यह मुझे बहुत अच्छी तरह से मालूम है, कि वे बहुत कठिन और कठोर परीक्षा लेते हैं, और उच्च से उच्चकोटि का योगी भी उनकी कसौटी पर खरा नहीं उतरता है। यह मेरा सौभाग्य रहा होगा, पूर्वजन्म के संस्कार रहे होंगे, कि मैं उनके प्राणों का एक अंश बन सका, उनके जीवन की एक धड़कन बन सका, एक चेतना बन सका।

उन्होंने मुझे दीक्षा प्रदान की, मगर उससे पहले जिन यंत्रणाओं से, जिन साधनाओं से, जिन तपस्याओं से, जिन कठिनाइयों से और जिस प्रकार की कसौटियों से मैं गुजरा हूं, दस हजार संन्यासी, योगी भी मिलकर उन यंत्रणांओं से, उन साधनाओं से नहीं गुजर सकते। यह मेरे जीवन का एक साक्षीभूत सत्य है, और इसीलिए सम्भवतः अत्यन्त कृपा करके उन्होंने मुझे अपना शिष्य बनाया।

सम्भवतः इसीलिए उन्होंने अपने सम्पूर्ण जीवन में, हजारों वर्षों की आयु में तीन शिष्य ही बनाये। मेरी तो ऐसी ही धारणा है, ऐसा ही चिन्तन है, ऐसा ही विचार है।

➳ ***पूज्य गुरुदेव! सिद्धाश्रम के बारे में अत्यधिक विशद ज्ञान आपने प्रदान किया। सिद्धाश्रम की प्राप्ति को सहज रूप से वर्णित करते हुए 'सिद्धाश्रम साधना सिद्धि' विधान को भी बताने की कृपा करें, जिस साधना को सम्पन्न कर हम भी उस दिव्यतम भावभूमि को स्पर्श कर सकें।***

➳ तुम्हारे इस प्रश्न का उत्तर देने से पूर्व मैं पुनः स्वयं उन्हीं दिनों की स्मृतियों में लीन हुआ जा रहा हूं जब मैंने अपने गुरुदेव, प्रातः

स्मरणीय पूज्यपाद परमहंस स्वामी सच्चिदानंद जी की कृपा दृष्टि प्राप्त कर सिद्धाश्रम प्रवेश हेतु सम्पन्न की जाने वाली साधना के प्रथम चरण में प्रवेश किया था। यह तो मैं ही जानता हूं कि इस प्रकार से साधना सम्पन्न करने के पूर्व उन्होंने मुझे किन–किन कसौटियों पर कसा था, किन–किन परीक्षा रूपी अग्नियों में डालकर बाहर निकाला था। मैं नहीं जानता कि मैं उनके मानस के कितना अनुरूप उनमें खरा उतरा सका, किंतु यह उन्हीं की अहैतुकी कृपा रही है, उन्हीं का मुझ पर असीम स्नेह और मेरे जीवन की धन्यता रही है, कि उन्होंने अपने ढंग से संतुष्ट होने के पश्चात मुझे सिद्धाश्रम में सदेह प्रवेश करने की न केवल साधना विधि प्रदान की, वरन उसके गोपनीय रहस्यों से भी परिचित कराया।

यदि मैं यह कहूं कि सिद्धाश्रम एक तपस्थली से भी अधिक एक भावभूमि है, तो कदाचित इसमें ऐसा कुछ अनुचित न होगा। कितने–कितने रहस्य कितने–कितने आयाम समेटे है यह दिव्य स्थली, उन को तो इन पन्नों के माध्यम से स्पष्ट किया ही नहीं जा सकता। केवल इस कारणवश ही नहीं कि सिद्धाश्रम के विषय में कतिपय वर्णन सर्वथा गोपनीय रहे हैं, उन्हें केवल गुरु मुख द्वारा विशिष्ट शिष्य को प्रदान करने का स्पष्ट और दृढ़ निर्देश है वरन इस कारणवश भी कि सिद्धाश्रम को शब्दों मे बांधा ही नहीं जा सकता। उसे तो स्वयं साधक की प्रखर चेतना के माध्यम से ही अनुभूत किया जा सकता है और वह अपने आप में जीवन की विलक्षण घटना होती है।

न केवल साधक अथवा शिष्य के जीवन की विलक्षण घटना अपितु समस्त ब्रह्माण्ड की एक विलक्षण घटना होती है, जब किसी शिष्य को सिद्धाश्रम प्रवेश साधना का रहस्य ज्ञात हो जाता है तब न केवल समस्त योगी–यतिगण वरन समस्त ब्रह्माण्ड ही स्तब्ध होकर उसे देखने के लिए विवश हो जाता है, और एक प्रकार से कहूं तो देवता भी उसके भाग्य से ईर्ष्या करने पर विवश हो जाते हैं, क्योंकि

देवलोक अथवा किसी भी अन्य लोक में संभव है भौतिकता के अथवा बाह्य सुख के अनेकानेक आयाम हों, किंतु जहां आंतरिक पवित्रता, दिव्यता, चैतन्यता, असीम शांति और इन सब से परे समस्त ब्रह्माण्ड में अपने लघु अस्तित्व को एक व्यक्तित्व के रूप में स्थापित करने की चर्चा आती है, वहां सिद्धाश्रम का नाम सदैव से पुनीत रहा है, पावन और श्रेष्ठतम रहा है।

केवल इस भौतिक देह के ही नहीं वरन अपनी अन्तर देह के भी षट्चक्रों के बेधन के पश्चात जब शिष्य इस प्रकार शोधित हो जाता है, जब वह अनेकानेक दीक्षाएं एवं अपने गुरुदेव द्वारा शक्तिपातों के विशिष्ट क्रम से होते हुए, गुरु की दृष्टि में सिद्धाश्रम प्रवेश का सुपात्र एवं एक प्रकार से कहें तो अधिकारी हो जाता है, तभी उसे अपने गुरुदेव के प्रसन्नता के किन्हीं विशेष क्षणों में ऐसी साधना का रहस्य मिल पाता है, जिसके पश्चात फिर उसे कुछ अन्य प्राप्त करना शेष नहीं रह जाता है।

तो तब वह साक्षीभूत बन जाता है और पग–पग पर अनुभव करता रह जाता है कि स्वयं उसके अंदर उसके गुरुदेव ही स्थापित होकर किस प्रकार से विभिन्न सोपानों को सम्पूर्ण करते जा रहे हैं। मैं समझता हूं कि यही शिष्य के जीवन की धन्यता होती है और उसे ऐसी ही स्थिति प्राप्त करने के लिए मन, कर्म, वचन से गुरु चरणों में प्रणत होकर, सेवा, भावना, विचार व निर्मलता के द्वारा जीवन में ऐसा कुछ प्राप्त कर लेना चाहिए।

सिद्धाश्रम, जैसा कि मैंने पहले भी कहा एक तपस्थली से अधिक भावस्थली है, अतः उसे जीवन में प्राप्त करने के लिए आवश्यक होता है कि पहले शिष्य के अन्तर्मन में एक सिद्धाश्रम का निर्माण हो सके, उसके तन–मन में वहां की पवित्रता, शीतलता और निर्मलता उतर सके, तभी अपने इन चर्म चक्षुओं से साक्षात कर पाना संभव होता है उस पुनीत स्थली का। जिस प्रकार निर्मल जल में केवल निर्मल जल ही घुल–मिलकर एकाकार हो सकता है, ठीक उसी प्रकार से सर्वप्रथम

गुरु–सान्निध्य में उनके शक्तिपातों से चैतन्य व निर्मल होता हुआ, साधक या शिष्य स्वयं में सिद्धाश्रमवत् बनता हुआ, अपने इसी जीवन में प्राप्त कर सकता है सिद्धाश्रम को।

इसी से यदि मैं यह कहूं कि सिद्धाश्रम में प्रवेश हेतु जहां साधना आवश्यक है, वहीं निरंतर गुरु का साहचर्य भी आवश्यक है तो अधिक उचित होगा। कदाचित साधना से भी अधिक गुरु साहचर्य का होना आवश्यक होता है। आवश्यक इस कारण से कि केवल गुरु का स्वरूप ही इस ब्रह्माण्ड में प्राणमय होता है तथा उनके साहचर्य में उनका स्पर्श पाते हुए ही शिष्य प्राणमय कोश में जा सकता है। प्राणमय कोश में पहुंच जाने के बाद ही सिद्धाश्रम की ओर गमन का मार्ग प्रशस्त होता है। जब शिष्य क्रमशः अपने प्राणों में अवस्थित होने लग जाता है, उसे इस कला का भान हो जाता है कि किस प्रकार से इस अन्नमय कोश का त्याग किया जा सकता है, तभी उसका चित्त सिद्धाश्रम प्राप्ति की चेष्टा की ओर उन्मुख होता है।

तभी शिष्य के जीवन में इस बात का चिंतन प्रारम्भ होता है कि मुझे इसी जन्म में जैसे भी हो उस पवित्रतम भूमि का स्पर्श कर लेना है, जो जीवन की पूर्णता कही गयी है। इस बात का चिंतन जब तक हृदय के समस्त आग्रह से नहीं होता तब तक जीवन में कुछ भी संभव नहीं हो सकता। केवल ओठों से सिद्धाश्रम गमन की बात कहना पर्याप्त नहीं वरन इस बात का आग्रह तो सम्पूर्ण मन, चित्त, प्राण व शरीर के एक–एक रोम से होना आवश्यक होता है, जो शिष्य अपने प्रयासों से संभव नहीं कर सकता।

क्योंकि उसके प्राण स्वयं में इतने तेजस्वी, इतने आग्रहशील हो ही नहीं सकते, किंतु गुरु का निरंतर साहचर्य उसके जीवन में ऐसा ही संभव कर देते हैं। वे इसे कैसे करते हैं, यह अध्यात्म की अत्यंत गूढ़ विषयवस्तु है। सामान्य रूप में इसे इसी प्रकार से समझा जा सकता है, और इस रूप में कहा जाता है कि ऐसा सद्गुरु अपने शक्तिपातों, दिव्यपातों के माध्यम से संभव करते हैं। किंतु इस क्रिया में शिष्य के

साथ किये जाने वाले प्रत्येक व्यवहार, प्रत्येक इंगित के भी अनेक भेद–उपभेद होते हैं। उनका कोई भी इंगित व्यर्थ होता ही नहीं। गुरु के प्रत्येक शब्द का, उनके श्रीमुख से उच्चरित एक–एक वाक्य के कई–कई अर्थ होते हैं ओर जिस प्रकार एक सामान्य सी दिखती देह में सात अन्य देह छिपी होती है, वे वाक्य उन्हीं देहों को चैतन्य करने की क्रिया ही होते हैं।

वास्तव में मैं धन्य हूं कि मैंने न केवल अपने गुरुदेव परमहंस स्वामी सच्चिदानंद जी के साहचर्य में ऐसा सब कुछ प्राप्त किया, वरन उन्हीं के द्वारा प्रदत्त प्रज्ञा के माध्यम से इन भेद–उपभेदों को आत्मसात भी किया। यदि कभी प्रभु ने अवसर दिया, तो मेरा विचार व योजना इन तथ्यों पर एक विस्तृत ग्रंथ लिखने की है, जो सिद्धाश्रम प्राप्ति के इच्छुक साधकों के जीवन की एक अनमोल धरोहर होगी, साथ ही उन्हें सिद्धाश्रम प्राप्ति कराने में सहायक तो होगी ही।

आगे मैं तुम्हारे प्रश्न के उत्तर में सिद्धाश्रम से सम्बन्धित साधना–विधि को स्पष्ट कर रहा हूं, जो इस क्षेत्र में आगे बढ़ने के इच्छुक, अपने गुरु के प्राणों से एकाकार होने के लिए आतुर शिष्यों के लिए प्रथम चरण है। इस साधना विधि को स्वयं मैंने भी सम्पन्न किया है, अतः मैं प्रामाणिकता से कह सकता हूं कि यह साधना–विधि अपने–आप में अद्वितीय और अप्रतिम साधना–विधि है। साथ ही यह अपने आप में सरल और सहज भी है, जिसे कोई गृहस्थ शिष्य भी, बिना अपने दैनिक जीवन में कोई विशेष परिवर्तन किये सम्पन्न कर सकता है।

साधना विधान

अपने गुरुदेव से अनुमति प्राप्त कर इसे किसी भी सोमवार अथवा गुरुवार से प्रारम्भ किया जा सकता है। 'गुरुदेव के चैतन्य चित्र' को प्राप्त कर उसे अपने दायीं ओर आम की लकड़ी के पट्टे पर पीला वस्त्र बिछा कर चावलों से स्वस्तिक चिन्ह बना कर उसके ऊपर

स्थापित करें। मानसिक रूप से निरंतर 'ॐ गुरुभ्यो नमः' मंत्र का जप करते रहें तथा सुगंधित अगरबत्ती, दीपक, पुष्प माला, नैवेद्य आदि समर्पित कर सफलता प्राप्ति की याचना करें। इसके बाद अपने सामने दूसरा आम की लकड़ी का पट्टा बिछा कर चावलों की तीन ढेरी स्थापित करें प्रत्येक ढेरी के ऊपर एक सुपारी (मौली लिपटी हुई) स्थापित करे। ये तीनों पारमेष्ठि गुरु, दिव्य गुरु एवं आत्म गुरु की प्रतीक हैं। इन ढेरियों के पीछे ताम्रपात्र में दिव्य चेतना से युक्त 'गुरु यंत्र' स्थापित कर त्रिगंध (कुंकुम, केसर, कर्पूर का मिश्रण) अर्पित करें तथा ढेरी के समक्ष शुद्ध घी का दीपक लगाएं। यह दीपक अखण्ड रूप से प्रज्ज्वलित रहना चाहिए। इसके बाद अपनी बायीं ओर एक आम की लकड़ी के पट्टे पर ताम्बे का जल से भरा एक लघु कलश रख उसके ऊपर लाल वस्त्र से लिपटा नारियल स्थापित करें। कलश के सम्मुख चांदी की प्लेट में 'पारद गणपति' को स्थापित कर उनका त्रिगंध से तिलक कर संक्षिप्त पूजन करें।

इसके पश्चात स्वयं त्रिगंध से तिलक करें व जिस स्फटिक माला से मंत्र जप किया जाता है उसके सुमेरू पर भी त्रिगंध का टीका लगा कर निम्न मंत्र की नित्य 51 माला मंत्र जप करें। यह रात्रिकालीन साधना है और साधक इसे रात्रि दस बजे से प्रारम्भ कर जब तक मंत्र जप पूर्ण न हो, अखंड रूप से करें –

मंत्र

।। ॐ ह्रीं परम गुरुवै साक्षाद्भवं ह्रीं नमः।।

यह आठ दिनों की साधना है और अधिक उचित होगा कि साधक इसे एक गुरुवार से प्रारम्भ कर अगले गुरुवार को सम्पूर्ण करे। इस साधना में कठोरता से नियमों का पालन अत्यावश्यक है, जिसमें एक समय अत्यंत हल्का भोजन (संभव हो तो केवल फलाहार) लेना, भूमिशयन करना तथा ब्रह्मचर्य का पालन करना तो शास्त्र निर्देशित है ही, साथ ही यथासंभव कम से कम वार्तालाप करें एवं

गुरु चिंतन में लीन रहें।

साधना की समाप्ति पर (अर्थात शुक्रवार को) एक हजार एक शुद्ध घी की आहुतियां गुरु मंत्र से देकर (इस साधना में निर्देशित मंत्र से नहीं) पांच बालिकाओं एवं पांच बालकों, जिनकी आयु दस वर्ष से अधिक न हो भोजन करा कर दक्षिणा आदि से संतुष्ट करें।

इस प्रकार साधना सम्पन्न करने के पश्चात शिष्य या साधक जितना शीघ्र हो सके, अपने गुरुदेव से व्यक्तिगत रूप से मिलकर, उनसे इसके आगे के निर्देश प्राप्त करने व आशीर्वाद प्राप्ति की याचना करे।

वस्तुतः शिष्य के जीवन का उसी दिन से पुण्योदय प्रारम्भ हो जाता है, जब से वह ऐसी श्रेष्ठ साधना में रत होने का मानस निर्मित कर अपने गुरुदेव के समक्ष सफलता प्राप्ति हेतु आशीर्वाद की याचना लेकर उपस्थित हो जाता है।

तुम सभी के मन में ऐसे श्रेष्ठ भाव उत्पन्न हों, तुम्हें जीवन में सिद्धाश्रम को अपनी इन्हीं आंखों से, इसी जीवन में, मेरी ही उपस्थिति में निहार लेने का सौभाग्य प्राप्त हो, मैं तुम सभी को ऐसा ही आशीर्वाद दे रहा हूं।

सद्गुरु हम सूँ रीझ के कह्या एक प्रसंग

. . . बस एक ही प्रसंग क्यों? सद्गुरु तो अपने प्रत्येक शिष्य से सदैव किसी नूतन प्रसंग की चर्चा करते रहते है, क्योंकि सद्गुरु किसी एक तथ्य पर, किसी एक शास्त्र या धर्मग्रंथ को पकड़ कर जीवन भर उसी पर प्रवचन देने वाले व्यक्तित्व होते ही नहीं

. . . उनके समक्ष तो बिखरे होते है
जीवन के विविध पक्ष, विविध आयाम।
भौतिक भी, आध्यात्मिक भी।

इसी को स्पष्ट कर रही हैं कृतियां जिनमें एक ओर यदि ज्ञान व चेतना है, तो वहीं जीवन का उच्छवास, जीवन की धड़कन और जीवन की मधुरता का भी समावेश है . . .

यह हमारे जीवन का पूर्व जन्मकृत कार्यों के कारण संयोग हो सकता है कि हमें इस जन्म में सद्गुरुदेव का स्पर्श उनका सान्निध्य सुलभ हो सका, किंतु यह संयोग तब सौभाग्य में परिवर्तित हो पाता है जब साधक के मन में अपने गुरुदेव से ऐसा कुछ प्राप्त करने की भावना उमड़े जो अपने आप में अद्वितीय हो . . . और ऐसी स्थिति तो केवल एक ही कही गई है कि साधक अथवा शिष्य अपने गुरुदेव के समक्ष उस चैतन्य तपस्थली की प्राप्ति के लिए आग्रहशील हो जाए जिसे सिद्धाश्रम कहा गया है, जो अपने आप में कैलाश के शिखर से भी अधिक उच्च और मानसरोवर से भी अधिक पावन कहा गया है। जहां की सिद्धयोगा झील में विचरण करती अप्सराओं को निहारने के लिए देवलोक के देवता भी आतुर रहते हैं, जहां की भूमि पर प्रकृति स्वंय अपना सौन्दर्य बिखेरने को व्यग्र रहती है।

सद्गुरुदेव का अपने शिष्यों पर असीम अनुग्रह व प्रेम ही है जो सिद्धाश्रम प्राप्ति की साधना को स्पष्ट करती यह पुस्तिका शिष्यों-पाठकों के समक्ष उपलब्ध हो पा रही है।

केवल सिद्धाश्रम साधना का वर्णन नहीं वरन सिद्धाश्रम प्राप्ति के अनेक सूत्रों का समाहितीकरण किया गया है इस पुस्तक में, शिष्यों के लिए, साधकों के लिए अथवा जो कोई अपना नाम श्रेष्ठता से अंकित कराने को आतुर हो, उसके लिए . . .

जो साधक, शिष्य या पाठक इस ज्ञान के प्रचार-प्रसार हेतु वितरित करने के लिए इस श्रृंखला की पचास या सौ प्रतिया खरीदना चाहें, उन्हें मूल्य में विशेष रियायत दी जायेगी।

— प्रकाशक